International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 3, March 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

समान नागरिक संहिता का प्रश्न : औचित्य एवम् संभावना

डॉ. ज़रफिशॉ ज़ैदी
सहायक आचार्य–दर्शनशास्त्र,
एम.एस.जे.स्नातकोत्तर राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर

समान नागरिक संहिता

हमारे देश में संविधान की निर्माण प्रक्रिया के समय से ही समान नागरिक संहिता का प्रश्न विचारणीय रहा है। इस समस्या पर विचार करने का एक तरीका तो यह हो सकता है कि हम यह देखें कि सभी धर्म आधृत विधियों में क्या ऐसी मौलिक समानता है, जिसके आधार पर सभी भारतीय नागरिकों के लिए समान विधि संहिता बनाई जा सके या कि इन कानून तन्त्रों में असमानताएँ इतनी गहन एवं संश्लिष्ट है कि समान विधि संहिता की सम्भावनाओं की बात करना अर्थहीन होगा। इससे भी मूलगामी प्रश्न यह है कि समान नागरिक संहिता लागू ही क्यों की जानी चाहिए? कुछ वर्षों से यह प्रश्न राजनैतिक और धार्मिक वाद–विवाद का केन्द्र बन गया है। मौलिक अधिकार बनाम नीति निर्देशक तत्त्व, धर्म निरपेक्षता, सम्प्रदायतीत एकता, समानता व स्वतन्त्रता जैसे मूल सिद्धान्त भी इसके जरिए पुनर्विचार का विषय बन गए हैं। इस सन्दर्भ में यह उल्लेखनीय है कि कुछ विद्वानों ने समान नागरिक संहिता को लागू करने के लिए अनेक तर्क दिए हैं। ये तर्क समान नागरिक संहिता की ऐतिहासिक, संवैधानिक एवं सामाजिक परिस्थितियों से निसृत दिखाई देते हैं। इन परिस्थितियों का संक्षिप्त परिचय स्वयं ही इन तका के परीक्षण का मार्ग सुझा देगा।

(७) समान नागरिक संहिता के पक्ष में दिए गए तर्कों का विश्लेषण

हमारे देश में हिन्दू एवं मुस्लिम विधि की ऐतिहासिकता का अवलोकन करने से यह ज्ञात होता है कि भारतीय हिन्दू समाज ढाई हजार वर्षों से श्रुति समूह प्रसूत विधि से विनयमित होते आए हैं, यद्यपि आठवीं व दसवीं शताब्दी में क्रमशः मध्य एशिया की अरब व तुर्क जातियों ने इस्लाम धर्म का परिचय भारतवर्ष से कराया और 16वीं शताब्दी में मुगलों ने यहाँ मुस्लिम सामाज्य की स्थापना की तथापि हिन्दू धर्मावलम्बी विवाह, दाय, विरासत, दत्तक, सम्पत्ति विभाजन आदि पारिवारिक मामलों में शास्त्रीय विधि एवं लोक प्रचलित मान्यताओं के अनुरूप ही व्यवहार किया करते थे। हिन्दुओं के दीवानी और फौजदारी मामलों में उनकी धार्मिक मान्यताओं का विशेष ध्यान रखा जाता था।[1] संक्षेप में मुगलकालीन विधि व्यवस्था में वस्तुस्थिति यह थी कि इस्लामी सार्वजनिक विधि सभी नागरिकों पर समान रूप से लागू होती थी, परन्तु विभिन्न धार्मिक समुदाय अपनी–अपनी व्यक्तिगत विधि से विनियमित होने के

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 3, March 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

लिए स्वतन्त्र थे। यह द्रष्टव्य है कि अंग्रेज हुक्मरानों ने विधि के सन्दर्भ में इसी मुगलकालीन परम्परा को अक्षुण्ण बनाए रखा। सन् 1772 में वॉरेन हेस्टिंग्ज ने उद्घोषित करते हुए कहा कि मुस्लिम सम्प्रदाय पर कुरान प्रोक्त विधि एवं हिन्दु सम्प्रदाय पर शास्त्रीय विधि ही लागू होगी,[2] परन्तु समय व्यतीत होने के साथ–साथ अंग्रेजी साम्राज्य ने मुगलकालीन विधि व्यवस्था में परिवर्तन करने शुरू किए और संविदा विधि, साक्ष्य विधि, व्यापार विधि में आमूल–चूलपरिवर्तन हुए। 1862 में इस्लामी दण्ड विधान के स्थान पर इण्डियन पीनल कोड आ गया और सन् 1937 में मुस्लिम व्यक्तिगत विधि (शरीअत) अधिनियम पारित किया गया।[3] मुस्लिम विधि इस अधिनियमान्तर्गत वर्णित दस विषयों तक सीमित हो गयी।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त व्यक्तिगत विधि बनाम समान नागरिक संहिता का विवाद सर्वप्रथम उभर कर सामने आया। इस सन्दर्भ में यह तथ्य उल्लेखनीय है कि 28 नवम्बर, 1948 को संविधान निर्मात्री सभा की अल्पसंख्यक उपसमिति की बैठक में इस समस्या पर गम्भीर वाद–विवाद हुआ। श्री अल्लादि कृष्णा स्वामी ने समान नागरिक संहिता का प्रबल समर्थन किया,[4] जबकि श्री के.एम. मुंशी की राय थी कि दाय और विरासत जैसे सामाजिक विषयों के सम्बन्ध में विधि को धर्म से पृथक् किया जाना चाहिए।[5] श्री एएम. भसीन और श्रीमती अमृत कौर ने देश की एकता एवं अखण्डता के लिए समान नागरिक संहिता का प्रबल समर्थन किया, जबकि श्री नजीरुद्दीन अहमद का विचार था कि जब राज्य किसी धार्मिक सम्प्रदाय की विधि के संरक्षण की गारन्टी दे चुका है तो फिर बगैर उस सम्प्रदाय की सहमति के उसमें परिवर्तन नहीं करनाचाहिए।[6] श्री मोहम्मद इस्माइल ने व्यक्तिगत विधि को सुरक्षा प्रदान करने हेतु मालिक अधिकारों में यह प्रावधान रखने को कहा था, कि प्रत्येक नागरिक को इस बात की भा स्वतन्त्रता होगी कि वह जिस वर्ग या सम्प्रदाय से सम्बन्ध रखता हो उसके पर्सनल ला पर अमल करे।[7] श्री महबूब अली बेग, श्री बी. पोंकार साहिब ने समान नागरिक संहिता के विरोध में अपना मत प्रस्तुत किया। इन सदस्यों द्वारा प्रस्तावित मत पर बोलते हुए डॉ. अम्बेडकर ने सभा को यह वचन दिया कि समान नागरिक संहिता भारतीय नागरिकों पर जबरदस्ती नहीं थोपी जायेगी। यह केवल उन्हीं पर लागू की जायेगी जो इसके लिए अपनी सहमति देंगे। मुसलमान तब तक शरीअत अधिनियम, 1937 के द्वारा ही विनियमित होते रहेंगे जब तक यह समुदाय स्वयं राज्य को संहिताबद्ध विधि के लिए अपनी सहमति न दे दे।[8] इस प्रकार संविधान निर्मात्री सभा के सदस्यों ने बहुमत से यह मत पारित किया कि समान नागरिक संहिता को संविधान के अध्याय तीन के बजाय अध्याय चार के नीति निर्देशक तत्त्वों में रखा जाए। इस अध्याय के अनुच्छेद 44 में संविधान यह उद्घोषित

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 3, March 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

करता है कि सम्पूर्ण राज्य भारत के सभी राज्य क्षेत्रों में एक समान नागरिक संहिता लागू करने का प्रयास करेगा।

समान नागरिक संहिता के पक्ष में प्रथम तर्क यही दिया जाता है कि संविधान के नीति निर्देशक तत्त्व जब इस अवधारणा की उद्घोषणा करते हैं तब भारतीय न्याय शासकीय व्यवस्था के लिए इसे लागू करना अवश्यकर्तव्यता की श्रेणी में आ जाता है। यह ज्ञातव्य है कि संविधान के भाग तीन में वर्णित मौलिक अधिकार और भाग चार में उल्लिखित राज्य के नीति निर्देशक तत्त्वों के परस्पर सम्बन्धों के विषय में यह सवाललगातार उठता रहा है कि इन दोनों में श्रेष्ठ एवं प्रधान कौन है? उपरोक्त तर्क इसी मूल संवैधानिक समस्या को संकेत कर रहा है। प्रतिपाद्य विषय के सन्दर्भ में इस समस्या को इस प्रकार कथित किया जा सकता है कि एक तरफ मौलिक अधिकारों के अनुच्छेद 15ए 25ए 26ए 28 और 29 भारतीय नागरिकों की धार्मिक व सांस्कृतिक स्वतन्त्रता को उद्घोषित करते हैं और इस प्रकार धर्म आधृत विधियों को मौलिक अधिकारों का सुरक्षा कवच प्राप्त हो जाता है। परन्तु दूसरी ओर नीति निर्देशक तत्त्वों के अनुच्छेद 44 राज्य को समान नागरिक संहिता लागू करने का निर्देश दे रहा है। अनुच्छेद 15ए 25ए 26ए 28ए 29 और 44 का एक साथ पालन करना असमंजस की स्थिति उत्पन्न करता है। इस समस्या पर विचार करने से पूर्व मौलिक अधिकारों और निर्देशक सिद्धान्तों के सम्बन्धों पर विचार करें तो ऐसा प्रतीत होता है कि नीति निर्देशक सिद्धान्त, राज्य के समक्ष एक स्वच्छ एवं न्यायसंगत प्रशासन का और एक लोक कल्याणकारी समाज की स्थापना का लक्ष्य या आदर्श प्रस्तुत करते हैं, जबकि मौलिक अधिकार व्यक्ति के न्यूनतम अधिकारों और स्वतन्त्रताओं की रक्षा के लिए राज्य को उत्प्रेरित करते हैं। वैसे 'लोक कल्याण' एक जटिल पद है, जिसका सुस्पष्ट अर्थ देना सम्भव नहीं है, किन्तु कम से कम यह तो कहा ही जा सकता है कि समाज का यदि कोई 'शुभ' है तो वह स्वयं व्यक्तियों के द्वारा ही 'शुभ' के रूप में अंगीकार किया जाना चाहिए। मौलिक अधिकारों एवं नीति निर्देशक तत्त्वों में से कौनसा अधिक महत्त्वपूर्ण है, इस संवैधानिक प्रश्न को एक तरफ रखते हुए हम यह कह सकते हैं कि हम आज साम्प्रदायिकता एवं वर्गीय हितों में परस्पर टकराव की चिंताजनक स्थिति से गुजर रहे हैं उसमें समान नागरिक संहिता को लागू करना वर्गीय संघर्ष और धार्मिक समुदायों के मध्य टकराव को बढ़ावा देने वाला सिद्ध होगा। तब निर्देशक सिद्धान्तों के समर्थन में या लोक कल्याण के लिए उठाया गया कदम स्वयं ही इन सिद्धान्तों के लक्ष्य से विचलन का कारण बन जायेगा।

तब यह कहना अधिक तर्कसंगत होगा कि सामाजिक न्याय के संवैधानिक मूल्य को दृष्टिगत रखते हुए संविधान के 13ए 15ए 25ए 26ए 28ए 29 अनुच्छेद, जो मौलिक अधिकार से

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 3, March 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

सम्बन्धित है व 44 अनुच्छेद, जो नीति निर्देशक तत्त्व से सम्बन्धित है, उनका यथासम्भव सुसंगत व सामंजस्यमय निर्वचन किया जाए। मौलिक अधिकारों की आदेशात्मकता और निर्देशक सिद्धान्तों की निर्देशात्मकता में समन्वय एवं संतुलन के प्रयास किए जाएं। इस समन्वित दृष्टिकोण के आधार पर हम अपने प्रतिपाद्य विषय के सम्बन्ध में यह कह सकते हैं कि धार्मिक व सांस्कृतिक स्वतन्त्रता का आदर करते हुए सभी धार्मिक समुदायों की पारस्परिक सहमति से समान नागरिक संहिता को लागू करने के बारे में धैर्यपूर्वक विचार करना चाहिए।

संवैधानिक दृष्टि से समान नागरिक संहिता के पक्ष में द्वितीय तर्क यह दिया जाता है कि भारतीय संविधान धर्मनिरपेक्षता के मूल सिद्धान्त के प्रति वचनबद्ध हैं। एक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र में धर्म आधृत विधियों की उपस्थिति असंगत प्रतीत होती है। अतः व्यक्तिगत विधियों को धर्म से मुक्त कर समान नागरिक संहिता लागू करना आवश्यक प्रतीत होता है। उपरोक्त तर्क का परीक्षण करने से पूर्व हमें यह ध्यान में रखना होगा कि आधुनिक लोकतान्त्रिक व्यवस्थाओं को धर्म–निरपेक्षता के धरातल पर दो वर्गों में श्रेणीबद्ध किया जा सकता है, हस्तक्षेप न करने वाले राज्य और विभेद न करने वाले राज्य। यथा अमेरिका प्रथम और भारत द्वितीय प्रकार का धर्मनिरपेक्ष राज्य है। यहाँ धर्मनिरपेक्षता से आशय है कि राज्य धर्म विशेष के प्रति सापेक्ष नहीं है हम इसे धर्म निष्पक्षता भी कह सकते हैं बल्कि उसकी नीति सर्वधर्म समभाव की है, इसलिए धर्म निरपेक्ष राज्य भारत सभी नागरिकों को समान रूप से धार्मिक स्वतन्त्रता प्रदान करता है तथा राज्य सभी धर्मों के प्रति समान दृष्टिकोण अपनाता है। धर्म के आधार पर न तो राज्य किसी प्रकार नागरिकों के मामले में हस्तक्षेप करता है और न ही पक्षपात करता है, परन्तु राज्य अपने क्रिया–कलापों में अधार्मिक नहीं है, क्योंकि वह प्रशासकीय शक्तियों और संसाधनों द्वारा सभी धर्मों को पूर्णतः सुरक्षित कर उनके स्वाभाविक विकास में सहायता करता है, निरपेक्ष होकर उनके अन्तर्विरोधों को रोकता है और विवादों को संवैधानिक प्रक्रिया से समाधानित करने का प्रयास करता है। इस प्रकार धर्म निरपेक्षता की स्वदेशी अवधारणा का भावार्थ धर्म से विमुख हो जाना नहीं वरन् समस्त धर्मों का समादर करते हुए उनकी उन्नति और उत्थान के प्रयत्न को आधार स्वीकृति प्रदान करना है। तब वस्तुतः न तो भारत राज्य धर्म उदासीन है और न ही अधार्मिक है। सच तो यह है कि भारत सर्वधर्म का समादर करने वाला राज्य है और यहाँ धर्म निरपेक्षता का उद्देश्य परस्पर भिन्न धार्मिक मतों के अनुयायियों के मध्य एक प्रकार के मैत्रीपूर्ण और भाईचारे की भावना का विकास करना है। तब भारत की धर्म निरपेक्ष छबि तो ऐसी हो जाती है कि यदि सभी मानव समूह अपने संव्यवहारों को धर्म प्रधान्य नियामक व्यवस्था से विनिययमित करना चाहते हैं तो यह स्वतन्त्रता धर्म निरपेक्षता के

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 3, March 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

सिद्धान्त से असंगत नहीं वरन् अनुकूल प्रतीत होती है, क्योंकि यदि मानव समूहों की इच्छा के विरुद्ध समस्त धार्मिक समुदायों के अनुयायियों के लिए समान विधि सम्मत मार्ग प्रस्तावित किया जाता है तो यह प्रस्ताव भारत की धर्म निरपेक्ष छवि के प्रतिकूल होगा।

समान नागरिक संहिता के पक्ष में तीसरा तर्क यह दिया जाता रहा है कि धर्म आधत विभिन्न व्यक्तिगत विधियाँ राष्ट्रीयता के पथ पर अग्रसर होने में सर्वप्रमुख बाधा है। इसलिए राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता हेतु समस्त भारतीयों के लिए एक विधि तन्त्र अपेक्षित है, किन्तु यह एक प्रान्त मान्यता है कि समान विधि को लागू किया जान धर्मसमभाव व एकता में सहायक होता है। वैसे यह ऐतिहासिक तथ्य है कि भारतवा में अनेक काल खण्डों में इसी अनेकता के रहते हुए धर्म समभाव के द्वारा राष्ट्रीय एकत की प्राप्ति की है, जबकि पाकिस्तान, अफगानिस्तान और श्रीलंका जैसे राष्ट्रों में जहाँ समस्त नागरिक समान विधि सिद्धान्तों से विनियमित होते हैं. राष्ट्रीय अलगाववाद अपनी चरम सीमा पर है। हमारा देश विभिन्न सांस्कृतिक और धार्मिक तत्त्वों का संश्लेषण कहा जा सकता है। इस अनेकता और विभिन्नता का आदर करते हुए राष्ट्रीय एकता के लिए विधिक एकीकरण के बजाय भारतीय समाज में भावात्मक एकीकरण के प्रयास करना अधिक तर्कसंगत प्रतीत होता है। जब सामाजिक एकता होगी तो स्वतः ही विधिक एकता के लिए एक स्वस्थ आधार उपलब्ध हो जायेगा। समान नागरिक संहिता के पक्ष में दिए गए तर्कों के विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि नीति निर्देशक सिद्धान्तों, धर्म निरपेक्षता और राष्ट्रीय एकता के आधार पर समस्त भारतीय नागरिकों के लिए समान विधि शृंखला का औचित्य स्पष्ट नहीं होता है। इसकी न तो अनिवार्यता दिखाई देती है, न ही वर्तमान परिस्थितियों में यह सम्भाव्य दिखाई देती है। इस विषय पर उपरोक्त विचार को ध्यान में रखते हुए अब हम मूल विषय के कुछ अन्य पक्षों की विवेचना की ओर अग्रसर हो सकते हैं।

इस अध्याय के प्रारम्भ में हम इस विषय पर विस्तृत विचार–विमर्श कर चुके हैं कि हमारे देश में कार्यान्वित मुस्लिम विधि इस्लामी विधि, का एक ऐसा अंश है, जिसमें कुछ इस्लामी मूल्यों का हनन हो रहा है जैसे तलाक–उल–बैन का प्रचलन, बहुविवाह का दुरुपयोग और पतियों द्वारा पत्नियों के साथ असमानता व दुराचारपूर्ण व्यवहार आदि । इस सन्दर्भ में यह भी उल्लेखनीय है कि तथ्यतः ऐसा होता रहा है कि मुस्लिम विधि के कुछ विशिष्ट कानूनी प्रावधान अन्य सम्प्रदायों के व्यक्तियों के लिए निहित स्वार्थों की पूर्ति का साधन बन चुके हैं। उपर्युक्त मत को सरला मुद्गल वाद के परिप्रेक्ष्य में आसानी से समझा जा सकता है। उपरोक्त वाद से यह वस्तुस्थिति स्पष्ट होती है कि कुछ हिन्दू पति विधि सम्मत विवाह विच्छेद विधि और तलाकशुदा पत्नी को गुजारा भत्ता दिए जाने से बचने के लिए धर्म

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 3, March 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

परिवर्तन की आड़ में इस्लामी विधि सिद्धान्तों का दुरुपयोग कर रहे हैं, जिससे प्रभावित व्यक्तियों के मानव अधिकारों और संविधान प्रदत्त मौलिक अधिकारों का स्पष्टतया हनन हो रहा है। फिर ना सिर्फ अन्य धर्मों के अनुयायियों के द्वारा वरन् मुस्लिम समाज के अधिकांशतः अनुयायी इस्लामी विधि का स्पष्ट उल्लंघन कर रहे हैं। स्त्री के विवाह विच्छेद अधिकार की अवहेलना, तलाक उल बिद्दत, बहुविवाह का दुरुपयोग, पत्नियों के साथ असमानतापूर्ण व्यवहार, मेहर का ना दिया जाना, इसके कुछ उदाहरण हैं। तीसरे, हमारे देश में मुस्लिम विधि के भ्रान्त, अपूर्ण और मिथ्या निर्वचन ने अनेक प्रान्तियों को जनम दिया है। तदन्तर न्यायालयीन प्रक्रिया में इसके स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर हुए है। इस परिचर्चा से जो चित्र उभरकर सामने आता है, उसके आधार पर हम कह सकते हैं कि अनेक मुस्लिम विधि सिद्धान्तों में अन्तर्निहित इस्लामी मूल्यों का प्रतिबिम्ब धुंधला और धूमिल पड़ चुका है, जिससे यह विधि सिद्धान्त मुस्लिम सम्प्रदाय व अन्य सम्प्रदायों के व्यक्तियों के लिए निहित स्वार्थों की पूर्ति का साधन बन चुका है, जिसके दुष्प्रभाव व्यक्तियों के जीवन पर पड़ रहे हैं और विशेषतया नारी वर्ग इस उत्पीड़न का शिकार है।

ऊपर वर्णित परिप्रेक्ष्य में यह कहना उचित होगा कि इस्लामी विधि के कुछ विशिष्ट बिन्दुओं पर अपना ध्यान केन्द्रित करके उन्हें परिसंशोधित किए जाने का प्रयास किया जाए तभी इन आक्षेपों का सन्तोषजनक उत्तर सम्भव हो सकता है। इस प्रयास में मुस्लिम समुदाय के प्रबुद्ध जन सक्रिय योगदान दें। इस समुदाय की सर्वसम्मति से भारतीय मुसलमानों की नैतिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए और संवैधानिक मूल्यों से अनुकूलता बनाते हुए एक विस्तृत विधान तैयार किया जाए, जिसमें समयानुसार परिवर्तन की प्रक्रिया भी अंकित की जाए। इस प्रकार समान नागरिक संहिता पर विचार करने के बजाय हमें इस्लामी विधि के संहिताकरण की सम्भावनाओं पर विचार करना चाहिए। मनुष्यों में जो समानता है और जो उन्हें कुछ मूलभूत मूल्यों को स्वीकार करने को ओर प्रेरित करता है उसके अतिरिक्त उनमें जो भेद हैं, वे भी महत्त्वपूर्ण हैं और इनका सम्बन्ध मनुष्य की बाह्य सामाजिक व सांस्कृतिक दशाओं से होता है। भिन्न–भिन्न रोति–रिवाजों, परम्पराओं और मान्यताओं को मानने वाले मानव समूहों के कानून तन्त्र कुछ विशिष्ट अभिवृत्तियों की ओर संकेत करते हैं, जिनकी अवहेलना नहीं की जा सकती। सभी धर्मों के वैयक्तिक कानूनों को एक बारगी समाप्त करके नए सिरे से एक नागरिक संहिता बनाना और उसे बलपूर्वक लागू करना स्वयं नैतिकता की दृष्टि से अनुचित जान पड़ता है। समसामयिक परिस्थितियों को देखते हुए संवैधानिक मूल्यों से अनुकूलता रखते हुए सभी व्यक्तिगत विधियों के कुछ बिन्दुओं पर परिसंशोधन करना ही

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 3, March 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

पर्याप्त जान पड़ता है। इस्लामी कानून तंत्र में ये परिवर्तन क्या हों? अब हम इस प्रश्न पर विचार की ओर अग्रसर होते हैं।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 3, March 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

संदर्भ सूची

1. अकबर के काल में हिन्दुओं के मुकदमे सुनने के लिए ब्राह्मण नियक्त किए जाते थे। वी.डी. महाजन – मध्यकालीन भारत का इतिहास, पृ. 312

2. रेग्यूलेटिंग एक्ट सैक्शन 23य इस काल में 99: लोग तीन प्रमुख धर्मों को मानने वाले थे–हिन्दु, मुस्लिम और बौद्ध।

3.इस अधिनियम की धारा 2 यह उपबंध करती है कि किसी विपरीत रूढ़ि या आचार के होते हुए भी इच्छा पत्र होन उत्तराधिकार, स्त्रियों की विशेष सम्पत्ति (उत्तराधिकार, संविदा, हिबा या निजी विधि के किसी अन्य उपबंध के द्वारा प्राप्त की गई सम्पत्ति भी सम्मिलित है) विवाह विच्छेद (जिसमें तलाक, ईला, जिहार, लिएन, खुला और मुबारत सम्मिलित है), निर्वाह वृति, मेहर, वसीयत, दान, न्यास, न्यस्त सम्पत्तियों और वक्फ से सम्बन्ध रखने वाले सभी प्रश्नों के विषय (सिवाय कृषि भूमि से सम्बन्धित नियमों के प्रश्नों) में जिनमें दोनों पक्षकार मुसलमान हो विनिश्चय का नियम मुस्लिम विधि होगी।

4. जब अंमेज भारत में आए तो उन्होंने इस देश के सभी नागरिकों के लिए एक ही दण्ड विधि का प्रावधान रखा, चाहे वो अंग्रेज हो, हिन्दु हो या मुसलमान । तब मुसलमानों ने इस प्रावधान को स्वीकार किया था। उन्होंने ब्रिटेन के खिलाफ आन्दोलन क्यों नहीं किया? हम यह नहीं भूले कि विभिन्न यूरोपीय देशों में हिन्दु हैं, यहूदी हैं, ईसाई हैं। मैं यह जानना चाहूँगा कि फ्रांस, जर्मनी, इटली व यूरोप के विभिन्न देशों में इन सबके लिए अलग–अलग कानून बनाए जाते हैं या सम्पत्ति के उत्तराधिकार कानून समान है। यह भी बताया जाना चाहिए कि इन राज्यों में अलग–अलग जातियों व धर्मावलम्बियों के लिए यह कानून अलग–अलग हैं या एक हैं।

5ण कान्स्टीट्यूशनल एसेम्बली डिबेट्स, VII, 547

6. कान्स्टीट्यूशनल एसेम्बली डिबेट्स, VII, 721

7ण कान्स्टीट्यूशनल एसेम्बली डिबेट्स VII, 721

8ण कान्स्टीट्यूशनल एसेम्बली डिबेट्स, VII, पृ.551

.....